उर्दू अखबार
बेदारी का आईना

फजले गुफरान

एक दशक से अधिक समय से पत्रकारिता में सक्रिय श्री गुफरान की फिल्मों और अन्य सामाजिक विषयों पर अच्छी पकड़ है। प्रिंट मीडिया के साथ-साथ श्री गुफरान को इलेक्ट्रानिक मीडिया का भी समान अनुभव है। दैनिक हिन्दुस्तान, न्यूज 24 में काम करने के बाद अभी वे स्वतंत्र लेखन कर रहे हैं। श्री गुफरान को कई विषयों पर फेलोशिप भी मिल चुकी है।

दैनिक हिन्दुस्तान में रहते हुए उन्होंने फीचर विभाग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उस समय उन्होंने के कई समसामयिक महत्वपूर्ण विषयों पर अपनी लेखनी चलाई और फिल्म समीक्षा लिखने का एक अलग अंदाज पाठकों के सामने पेश किया। बाद में वे चैनल न्यूज 24 में चले गए और वहां भी अपने काम की धाक जमाई।

देश की एक बड़ी आबादी उर्दू पढ़ने-लिखने वालों की है। इनमें मुस्लिम, सिंधी, पंजाबी, हिंदू सभी शामिल हैं। लेकिन इनके पढ़ने-लिखने की मुस्तैदी को यदि अखबार को रीडर के आइने में देखा जाए तो तस्वीर कुछ साफ नहीं दिखती। आंकड़ों में आज राष्ट्रीय स्तर की कई उर्दू पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित होती है, मगर उनकी रीडर और उनके स्तर का जायजा लें तो भी कोई बहुत उत्साहजनक बात सामने नहीं आती। इनकी वजह इसमें केवल खास वर्गों की खबरें ही परोसी जाती हैं, अंग्रेजी व हिंदी अखबारात की तरह उर्दू अखबार में पूरे सोसाइटी की खबरें नहीं होती। इसमें आज भी धार्मिक सीमाएं बाधा बनी हुई है। इस बाबत बुद्धिजीवी व संपादन से जुड़े उच्च पदस्थ पत्रकारों का मानना है कि दरअसल कौम के आर्थिक हालात बेहतर नहीं है। वे मानते हैं कि उर्दू के रिसाले पढ़े तो खूब जाते हैं किंतु खरीदे कम जाते हैं। खरीदता एक है और पढ़ते उसे दस हैं। मुंबई, दिल्ली, बिहार और उत्तरप्रदेश से छपने वाला उर्दू अखबार इंक्लाब और यूपी, बिहार और दिल्ली से पब्लिश होने वाले दैनिक उर्दू समाचार पत्र राष्ट्रीय सहारा की हालत कुछ हद तक बेहतर मानी जा सकती है। कभी कौमी आवाज कुछ हद तक कौम की आवाज को बुलंद कर रहा था जहां अब पूरी तरह ताला जड़ चुका है। कौमी तन्जीम जैसे अखबारों की खस्ताहालत पर आंसू बहाए बिना नहीं रहा जा सकता है।

विभिन्न राज्यों में इन अखबारों पर नज़र डालें तो महाराष्ट्र से पब्लिश होने वाला इन्कलाब व उर्दू टाइम्स पढ़ने वालों की अच्छी खासी तादाद है। राष्ट्रीय सहारा उर्दू ने अपने वकार को जिंदा रखा हुआ है। लखनऊ, दिल्ली व बिहार से छपने वाले इस अखबार में राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय हर सतह की खबरें होती है। वहीं हैदराबाद से निकलने वाले मुनसिफ व डेली सियासत की समाज में अच्छी पकड़ है। आवाज मशरिक, मिलाप, अवाम, प्रताप व हिंद समाचार, नई दुनिया (साप्ताहिक), आलमी खबर (साप्ताहिक) की रीडरशिप लगातार कम हुई है। अगर राजधानी दिल्ली की बात करें तो यहां गली मुहल्लों से दर्जनों अखबार छपते हैं। ढेरों उर्दू अखबार निकलते हैं। लेकिन राष्ट्रीय पहचान की बात करें तो आज भी सिफर है। ये तो हुई रोजाना पब्लिश होने होने वाले अखबार की बात। पाकीजा आंचल, महकता आंचल जैसी कई पत्रिकाओं की रीडरशिप में कमी देखी जा रही है।

आरोप यह भी लगता है कि अखबार कई बार निजी स्वार्थ के लिए या फिर राजनीतिक फायदे के लिए निकाले जा रहे हैं। इसी के बरअक्स दूसरी अहम बात यह है कि उर्दू पत्रकारिता को उपयुक्त संरक्षण भी नहीं मिल पाया है और इस तरह की कोई मुहिम भी नहीं बन पाई जिसके बिना पर ये अखबारात बिक्री और रीडरशिप के मामले में खास मुकाम हासिल कर सकें।

इससे कुछ दानिशवर इत्तेफाक रखते हैं कि उर्दू का दायरा सिमट गया है। उर्दू अखबार वाले माजी (भूतकाल) में खोए रहते हैं। सिर्फ लच्छेदार ज्ञान की बातें बघारने भर से बात नहीं बनती। तथ्य भी मार्बन होने चाहिए। अगर देश में कोई घटना दुघडटना हो जाती है तो उसमें भी मुस्लिमों के साथ हुई घटना-दुर्घटना का खाका खींच लेते हैं। साधारण भाषा का इस्तेमाल करने की जहमत नहीं उठाते। तकनीकी ज्ञान की कमी है सो अलग। दूसरी अहम बात यह है कि पहले उर्दू रोजी रोटी का जरिया हुआ करती थी। लोग अच्छी तरह उर्दू जानते और पढ़ते थे। आज इसे मुस्लिमों की भाषा से जोड़ दिया गया है।

कुछ लोग इसके लिए सरकार को जिम्मेदार ठहराते हैं। मगर सरकार की भूमिका को खंगालें तो यह मानना पड़ेगा कि आखिर सरकार कैसे किसी जबान को जबरन जिंदा रख सकती है। मलयालम, कन्नड़ व तेलुगू या फिर किसी दूसरी क्षेत्री भाषाओं में जब अखबार या पत्र-पत्रिकाएं पब्लिश होती है तो उसे उस भाषा के लोग बड़े चाव से खरीदकर पड़ते हैं। दरअसल मुसलमान खुद उर्दू को प्रमोट नहीं करते। अब सवाल यह उठता है कि उर्दू अखबारों को भी राष्ट्रीय स्तर पर पहचान मिले तो मिले कैसे पाठक और अखबार मालिक जागरूक बनें तो इस मसले पर काफी कुछ किया जा सकता है। जाहिर है सोच में तब्दीली लाने की जरूरत है। एक वर्ग विशेष के तौर पर जब उर्दू अखबारों का इस्तेमाल किया जाएगा तो लोग उससे दूर होंगे ही। दूसरी तरफ जो लोग उर्दू जानते हैं उन्होंने भी भाषा का प्रचार प्रसार नहीं किया। फिर ये उर्दू अखबारात हमेशा से अंतरराष्ट्रीय स्थिति का खुले तौर पर विरोध करते रहे। पढ़ा लिखा मुस्लिम तबका दुनिया से कटा रहना नहीं चाहता वह अखबार में हर तरह की खबर ढूंढ़ता है। उनका मानना है कि उर्दू अखबार में राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय मामलात पर तफ्सील से बातें होंगी तो रीडरशिप में इजाफा हो सकता है मौजूदा हालात बने रहे तो उर्दू अखबारों को सफा-ए-हस्ती से मिटने में देर नहीं लगेगी। अगर दैनिक जागरण और राष्ट्रीय सहारा की तरह दो चार और बड़े अखबारी उद्योग समूह सामने आएं तो बेहतर उम्मीदों की रौशनी जलेगी। ऐसा भी नहीं है कि उर्दू में कोई बड़ा दैनिक राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान न बना पाए।